बुन्देलखण्ड के लोकसाहित्य में रामकथा

*** डॉ. यशवन्त सिंह**

बुन्देलखण्ड भारत का हृदय प्रदेश है, जिसमें विन्ध्य-भाडैर पर्वत मालाएँ यत्र-तत्र फैली हुई हैं। इसी कारण इस क्षेत्र को विंध्यटवी, विन्ध्यभूमि और विन्ध्य प्रदेश कहा गया है। कालचक्र के परिस्थितियों वश काशी के गहरवार राजपूत विन्ध्य क्षेत्र के शासक बन गये थे, जिसमें विन्ध्यवासिनी देवी का परम भक्त हेमकर्ण पंचमवीर विन्ध्येला प्रमुख प्रतापी राजा हुआ। इसी हेमकर्ण पंचमवीर विन्ध्येला के वंशज राजाओं के शासित राज्य क्षेत्र का नाम विन्ध्येलखण्ड पड़ गया था[1]। कालान्तर में मुख सुख के कारण विन्ध्येला अपभ्रंश में बुन्देला और विन्ध्येलखण्ड बुन्देलखण्ड नाम में परिवर्तत हो गया[2]। प्राचीन काल में यह प्रदेश विभिन्न नामों यजुर्होति, चेदि,दशार्ण, जैजाकभुक्ति, विन्ध्येलखण्ड, जुझौति, जुझारखण्ड से सम्बोधित होता रहा है, किन्तु बुन्देलखण्ड वास्तव में ग्यारहवीं शताब्दी में बुन्देला राजपूतों के उत्कर्ष से ही अपने वर्तमान रूप में आया। बुन्देलखण्ड की सीमा का निर्धारण पन्ना नरेश छत्रसाल बुन्देला के समय में प्रचलित निम्न लोकोक्ति के माध्यम से होता है-

इत यमुना, उत नर्मदा, इत चंबल, उत टौंस। छत्रसाल सों लडन की, रही न काहू हौंस[3]॥

अर्थात् उत्तर में यमुना, दक्षिण में नर्मदा, पश्चिम में चंबल तथा पूर्व में टौंस नदियों के मध्य स्थित क्षेत्र को बुन्देलखण्ड कहा जाता है, जिसके अन्तर्गत उत्तर प्रदेश के झाँसी, ललितपुर, हमीरपुर सहित सात जिले एवं मध्य प्रदेश के सागर दतिया, दमोह, पन्ना सहित सत्रह जिले समाहित हैं।

लोक साहित्य, लोक या जनसामान्य का अविभाज्य अंग है। प्राचीन समय में मनुष्य प्रकृति का उपासक था तथा प्राकृतिक जीवन व्यतीत करता था। उस समय उसका आचार-विचार, रहन-सहन सरल तथा स्वाभाविक था, उसके समस्त क्रियाकलाप- उठना, बैठना, हँसना, बोलना- स्वाभाविकता में रचे-बसे रहते थे। उस समय उसने अपने चित्त के आह्लाद एवं मन के अनुरंजन के लिए जिस साहित्य की रचना की, वही लोकसाहित्य के रूप में मौखिक परम्परा में उपलब्ध होता है[4]। निमाडी लोकसाहित्य के विद्वान रामनारायण उपाध्याय ने इसकी महत्ता को प्रकट करते हुए लिखा- **''मनुष्य ने (अपने बाह्य जगत में) जो कुछ किया, उसका वर्णन तो इतिहास में आ जाता है, लेकिन अपने मनोजगत में उसने जो कुछ सोचा-विचारा, रंगीन कल्पनाएँ बुनीं, सुन्दर सपने सँजोये, उन सबका लेखा जोखा लोकसाहित्य में सुरक्षित मिलता है[5]।''** लोकसाहित्य की कई विधाएँ प्रचलित हैं, उसकी साम्रगी देश की प्रत्येक जनपद में निवास करने वाले जनसामान्य के बीच सहज रूप से प्रापत होती है। बुन्देलखण्ड का जनसामान्य इस दृष्टि से अत्यन्त समृद्ध है। बुन्देलखण्ड के लोकसाहित्य में लोकगीत, लोककथाएँ, गाथाएँ, संस्कार गीत, पहेलियाँ, कहावतें, लोरियाँ, सूक्तियाँ, बच्चों के खेल के गीत आदि विधाओं की विस्तृत परम्परा विद्यमान हैं, जिनमें बुन्देलखण्ड के लोकजीवन और लोकसंस्कृति का समुज्जवल रूप दिखाई देता है।

बुन्देलखण्ड की लोकसंस्कृति भगवान राम की जीवनगाथा का संदर्भ दिये बिना अपनी पूर्णता प्राप्त नहीं कर सकती। जैसा कि सर्वविदित है, अयोध्या के राजकुमार रामचन्द्र जी अपने चौदह वर्ष के वनवास के प्रारम्भ में भ्राता लक्ष्मण एवं भार्या सीता के साथ इस क्षेत्र के मनोरम तीर्थ चित्रकूट में आकर ठहरे थे। उन्होंने यहाँ पर निवास करने वाली वनवासी जातियों में आर्य संस्कृति तथा वर्णाश्रम धर्म का भावबोध जागृत कर ऊंच-नीच अथवा आर्य अनार्य की विभेदक रेखाओं को नष्ट करते हुए राष्ट्रीय एकता का स्तुत्य प्रयास किया। अत: राम यहाँ की लोकचेतना की धमनियों में रक्त की भाँति प्रवाहित है। यहाँ के शिष्टसाहित्य में रामकथा काव्य की विस्तृत परम्परा मिलती है जिसमें आदिकवि वाल्मीकि से लेकर विष्णुदास, तुलसीदास, केशवदास व मैथिलीशरण गुप्त का सम्बन्ध किसी न किसी रूप में बुन्देलखण्ड से रहा है। रामकथा के आदिगायक महर्षि वाल्मीकि का आश्रम बाँदा जिले के अन्तर्गत बाँदा इलाहाबद मार्ग पर स्थित है। भगवान श्रीराम के मर्यादा पुरुषोत्तम चरित्र को स्थापित करने वाले गोस्वामी तुलसीदास का जन्म बाँदा जिले के ही राजापुर ग्राम में हुआ था। रीतिकालीन आचार्य केशवदास का सम्बन्ध बुन्देलखण्ड के ओरछा राज्य से रहा। विष्णुदास,कबीरदास से पूर्व के कवि हैं। तथा गायकों की श्रेणी में भी रखे जाते हैं। इनके द्वारा रचित रामायनी कथा में तुलसीदास के पूर्व की रामकथा का स्वरूप देखने को मिलता है। इसमें कथा का प्रारम्भ बालि सुग्रीव युद्ध से होता है तथा अन्त लंका में रावण का वध हो जाने पर हो जाता है। कवि विष्णुदास ने रामक्था के बहुत व्यापक आख्यान को अपनी रामायनी कथा में गुंफित किया है, जिसमें कुछ स्थल बहुत ही सुन्दर बन पड़े हैं। यथा हनुमान का लंका गमन, सीमता से वार्तलाप व किंकर वध आदि। रामकथा के आधुनिक गायकों में मैथिलीशरण गुप्त का स्थान अग्रणी है, जिन्होंने साकेत महाकाव्य के माध्यम से रामायण के उपेक्षित पात्रों उर्मिला, कैकई को प्रमुखता देकर रामकथा को आधुनिक परिवेश में प्रासंगिकता प्रदान की। ज्ञातव्य हो कि विष्णुदास बुन्देली भाषा के एक प्रमुख कवि हैं तथा मैथिलीशरण गुप्त बुन्देलखण्ड के झाँसी जिले के चिरगाँव के मूल निवासी थे।

हिन्दी प्राध्यापक, क.मुं. हिन्दी तथा भाषाविज्ञान विद्यापीठ, डॉ. भीमराव अम्बेडकर विश्वविद्यालय, आगरा।

इस प्रकार बुन्देलखण्ड में रामकथा की एक समृद्ध परम्परा प्राचीन काल से ही विद्यमान रही है ऐसा लोकजीवन में भगवान राम के प्रति अटूट आस्था व विश्वास के कारण सम्भव हो सका। लेकिन बुन्देलखण्ड के जनसामान्य के बीच प्रचलित लोकसाहित्य में रामकथा का एक दूसरा रूप ही देखने को मिलता है, जो शिष्ट साहित्य की मर्यादाओं में न बँधते हुए लोक की प्रवृत्ति के सर्वथा अनुकूल है। उदाहरणार्थ लोकवार्ता[6] में प्रकाशित बुन्देलखण्ड के बाँदा जिले से प्राप्त एक लोकगीत दृष्टव्य है–

''आम अमिलिया की नन्हीं-नन्हीं पत्तियों निबियाँ की शीतल छांह। वहि तरें बइठी ननद भौजाई चालै लागी रावन की बात॥
तुम्हरे देश भउजी रावन बनत है रावन-उरेह दिखाव। तो मैं एतना उरैहौं बारी ननदी जो घर करौ न लबार॥
राम की किरिया, लखन की किरिया, दशरथ लाख दुहाई। हमारी किरिया खायो बारी ननदी, तुम्हरा कहा होई जाय॥
अपनी किरिया खइत है भउजी, सेजिया पाँव न देंब। माँगौ न ननदी सुरही का गोबरा, भितिया लिपाओ दुइ हाथ॥
हाथ लिखिन दुई, पाँव लिखिन दुइ, लिखिन बत्तीसों दाँत। माथे का मथहर लिखैं नहिं पाइन, आय गये राजा राम॥
काहे माँ लुकाबौं रंग की गगरिया, काहे माँ लुकावौं दुइ हाथ। अँचला लुकावौ रंग की गगरिया, ड्योढा लुकावौ दुई हाथ।।
राम और लछमन जेवन बइठे, बहिनी के ढुरैं लागगि आँसू। कि बहिनी तोरा अनधन घटिगा, कि भउजी बोलै बड़े बोल।
जिन भइया तुम्हरे बारे के बैरी, भउजी लिखिन माँझ दुवार॥ नाहिं भइया मोरा अनधन घटिगा,
नहिं भउजी बोलिन बड़े बोल॥ साजौ नछमन रतुली पलकिया, भउजी का आवौ पठुवाय।
चलौ न भउजी अपने नैहरवा, तुम्हरे नैहर कछु वियाह॥ ना मोरे देवरा भाई औ बाप, न सगी काँख का भाइ।
न मोरे बबुली की दूसर धेरिया, केहकर रचा है वियाह॥ जबै भउजी तुम हियाँ का डहरिउ, हुवाँ लिहिन औतार।
एक बन नाक्यो, दूसर बन नाक्यो, तिसरे माँ लाग्यो पियास॥ बैठो तुम भउजी कदम की छहिंया, मैं देखि आवौं पनवास।
ऊचै चढिकै लछमन हेरैं, पानी नहिं संसार॥ कि पानी है सीता की तुतइया, कि दशरथ के ताल।
लैके पनियाँ कदँब माँ टाँगिन, लछमन घर चले जाँय॥ सुख के बहति बयरिया, लछमन, दुख के अई है नींद।
चटकि गै खिलिया, पटकि गा दोनवा, बुँदवा परा उनकी देह॥ वही बनमाँ सीता रोवति है, मानुख कोऊ न देखाय।
वही बन से एक तपसी निकरा, ठाडे सीतै समुझाय॥ ना रो सीता, ना रो सीता, तुम्हरे होइ हैं लवकुश पूत।
को मोरे होई नाउन बारिन, को मोरे धोबिन होइ॥ को मोरे होई सखी सहेलरी, मंगल आय सुनाव।
हमहीं होबै तोरे नाउन बारिन, हमहीं धोबिन होब॥ हमहीं होबै सखी सहेलरी, मंगल देब सुनाय।
जब सीता के नवकुश भे हैं, रोचना दिहिन पठुवाय॥ या रोचना दिहो लछमन देवरै, उन्हें न पापी है बताव।
भरह भहर तोरा माथा रे लछमन, या रोचना उई दीन्ह। लवकुश बेटा खेलैं धनुहिया, लछमन ठाडे ओनियाँय।
किनके हो तुम नतिया पनतिया, किनके लगौ भतीज। राजा दशरथ के नतिया लगत हैं, लछमन केर भतीज॥
पिता अपने का नाँव न जानी, माता सितल देई के पूत। चलौ न लरकौ अपने भवन का, जहाँ बसै माता तुम्हार।
एक चुनी अंचल नवौ ऐ माता, आवत कंत तुम्हार॥ ऐसे कंत पूता मुखहूँ न देखी, जौन लिवाये बनवास।
चलौ न भउजी अपनी अजोध्यै, तुम बिन नगर उदास॥ मरि मैं जाँव जनम तजि डारौं, मैं न अजोध्यै जाँव।
धरती फाटे सिया समइहैं, मैं न अजोध्यै जाँव॥''

रामायण की प्रचलित कथा के अनुसार लोकापवाद के भय से राम ने सीता का त्याग किया था, पर इस लोकगीत में एक दूसरे कारण की सृष्टि हुई है। यहाँ पर जनसामान्य को सीता बनवास के अशोभन कार्य के लिए दोशी नहीं बनाया जाता। बल्कि अपनी ननद के अनुरोध पर सीता रावण का चित्र उरेहती या आलेखती हैं और उनका यह निर्दोष कृत्य ही उनके वनगमन का कारण बनता है। यह लोककवि की कल्पना हो सकती है। राम द्वारा सीता त्याग की कथा तो उसने सुन रखी होगी, परन्तु उसका असली कारण उसे नहीं मालूम। इसलिए अपने मन से वह उसकी सृष्टि करता है। मगर सीता के देश में रावण रहता है, यह कल्पना उसके मस्तिष्क में कहाँ से आयी? रावण को उसने सीता के देशवासियों के लिए इतना सुपरिचित कैसे मान लिया? क्या उसकी इस कल्पना में कुछ सच्चाई है? तो कहना होगा कि रावण की लंका जनकपुर से उतनी दूर नहीं थी, जितनी वह मानी जाती है। और रावण का वहाँ आना-जाना रहता था। जो विद्वान रावण की लंका अमरकंटक के आसपास अथवा छत्तीसगढ़ प्रान्त के बस्तर में होना मानते हैं, उनके पक्ष में समर्थन के लिए यह लोकगीत एक प्रमाण के रूप में मौजूद है।

लोकगीत के अनुसार बहिन की बात पर तुरन्त विश्वास कर भाई राम सीता को घर से निकाल देते हैं। उनके सामने इस तरह के विचार की कोई समस्या नहीं है कि बहिन सच कहती है या झूठ और सीता सती है या असती। वाल्मीकि के राम संकट में हैं, एक ओर तो लोकापवाद का भय और दूसरी ओर सीता का स्नेह। पर यहाँ इस तरह की कोई ऊहापोह नहीं है। करना या न करना इस तरह की विवेचना तो सुसंस्कृत एवं सभ्य मस्तिष्क की प्रखर चेतना का परिणाम है और उसके चक्कर में पड़कर ही वाल्मीकि के राम सीता को घर से अलग करने के लिए बहाना ढूँढ़ते हैं। पर यहाँ उसकी जरूरत नहीं है। सीता ने पर पुरुष की तस्वीर बनाई। वह असती है। बस, उसको

अलग करो। अनुज लक्ष्मण अपने अग्रज राम का समर्थन करता है। यह भी स्वाभाविक है। लक्ष्मण सीता से झूठ बोलते हैं कि चलो तुम्हारे यहाँ विवाह है। लक्ष्मण का सीता को बन ले जाने के लिए सीता के मायके में ब्याह का बहाना बनाना लोकजीवन के सर्वथा अनुकूल है। बुन्देलखण्ड में लड़की अपने मायके में हो रहे शादी ब्याह के इस तरह के समारोहों में शामिल होने के लिए हमेशा लालायित रहती है।

इस छोटे से लोकगीता में सीता त्याग की सारी कहानी एक साँस में कह दी गयी है। दृश्य के बाद दृश्य बदलते हैं। एक वन, दो वन और तीसरे वन को पार करके लक्ष्मण सीता को लेकर एक जगह पहुँचते हैं। सुख की पवन चलती है और सीता को दुख की नींदइ आ जाती है। लक्ष्मण सीता को वन में छोडकर चले जाते हैं। पानी की एक बूँद सीता की देह पर गिरती है। वे जाग पडती हैं। वन की स्तब्धता मानो और बढ़ गयी है। वन में अपने को अकेला पाकर सीता रो पड़ती है। इसी समय ना रो सीता ना रो सीता कैसी दया, करुणा और आश्वासन से भरी हुई आदेशवाणी होती है। आदिम लोकपुरुष के पास शब्द कम, परन्तु हृदय का आवेग अधिक था। इसीलिए उसकी सरल रचनाओं में हृदय को छूने की आश्चर्यजनक शक्ति विद्यमान मिलती है।

उस निर्जन वन प्रदेश में जहाँ कि अपना कोई भी नहीं है, आसन्न प्रसवा सीता के लिए नाइन, बारिन और धोबिन की चिन्ता करना कितना स्वाभाविक है, पुत्रजन्म के समय मंगल गीतों के सुनने की इच्छा तो बहुत ही मधुर। और तपसी के चिन्ता न करो, हम ही नाइन, बारिन, धोबिन और सखी सहेलरी बनेंगे, हम ही मंगलगीत सुनायेंगे ये ममता और वात्सल्यपूर्ण अभय वचन उतने ही मार्मिक। यहाँ महर्षि वाल्मीकि की जगह तपसी द्वारा सीता की सहायता करना, सायास हुआ मालूम पडता है। बुन्देलखण्ड की गिरि कन्दराओं में अभी साधू वेशधारी तपसी लोगों के दर्शन होते हैं। इसलिए लोककवि ने महर्षि वाल्मीकि का नाम न लेकर अपने आसपास विद्यमान तपसी द्वारा सीता की आपत्तिकाल में सहायता करवाई।

वन में लवकुश का जन्म होता है। सीता लक्ष्मण के पास रोचना भेजती है। वाल्मीकि की सीता पति राम को क्षमा कर सकती है, परन्तु लोकगीत का कवि सीता त्याग के अपराध के लिए राम को क्षमा नहीं करता, बल्कि सीता के द्वारा राम की तीव्र भर्त्सना करवाता है। उनको पापी कहलवाता है। इसीलिए सीता पुत्र जन्म का संदेश लक्ष्मण के पास भेजती है, पापी राम के पास नहीं। इसके पश्चात् वाल्मीकि की सीता राम के पास जाती है और अपने सतीत्व की परीक्षा देती हुई मानो पृथ्वी के गर्भ में समा जाती है। पर यहाँ सीता ऐसे स्वामी का मुख भी नहीं देखना चाहती, जिसने उनको बनवास दिया। वे मर जायेंगी, पर अयोध्या नहीं जायेंगी, धरती फटे तो उसमें समा जायेंगी, पर अयोध्या नहीं जायेंगी। बस यहीं पर आकर लोकगीत समाप्त हो जाता है। इस लोकगीत की महत्ता प्रकट करते हुए बुन्देली लोकसाहित्य के विद्वान कृष्णानन्द गुप्त ने लिखा–''नारी का कितना दर्प और स्वाभिमान उसमें प्रकट हुआ है। और दोनों की सीता में हिन्दू संस्कृति के उच्चतम आदर्शो के पोषक महाकवि वाल्मीकि की सीता में और समाज की किसी एक निचली श्रेणी के लोककवि की सीता में कितना अन्तर है। हमारे इस लोककवि के हृदय में जो नि:संदेह ही किसी प्राकृति एवं प्राथमिक समाज का कवि है–सीता का परम उन्नत और स्वाभाविक चित्र अनायास ही उद्‌भूत हुआ अथवा उसके समाज में नारी को वास्तव में इतनी स्वतंत्रता एवं उच्चता प्राप्त रही है, यह एक अध्ययन एवं खोज का विषय है।''[7]

इसी प्रकार बुन्देलखण्ड में प्रचलित स्त्रियों के राम लक्ष्मण व्रत की कथा द्वारा यह मालूम होता है कि राम वनवास के समय सीता जी एक वर्ष एक किसान के यहाँ उसकी बहिन बनकर रही। सीता की रसोई[8] नामक लोककथा का संक्षिप्त रूप इस प्रकार है– राम लक्ष्मण वन को चले, सीता जी भी उनके साथ हों लीं। एक वन चलते, दो वन चलते एक जगह सीता जी को प्यास लगी। राम ने उनको पास की बावडी से पानी पी आने को कहा। पानी पीकर लौटते समय सीता जी एक किसान के तिल के खेत से होकर गुजरीं जिससे उनके पैरों की बिछियों में तिल के बारह दाने अनजाने ही बिंध गये। राम ने इसे किसान के खेत की चोरी माना तथा सीता जी को बारह महीने किसान के यहाँ रहकर चोरी का प्रायश्चित करने को कहा। राम लक्ष्मण आगे वन को चले गये तथा सीता जी किसान के खेत की मेंड पर जा बैठीं। कुछ समय पीछे किसान खेत पर आया तो उसने सीता जी को मेंड पर बैठी देख पूछा–बहिन तुम कौन हो और यहाँ किसलिए बैठी हो? सीता जी ने उत्तर दिया मैं तुम्हारी धर्म की बहिन हूँ, अपने भाई के यहां कुछ दिन रहने आयी हूँ। इतना सुनकर किसान सीताजी को अपने घर ले गया और अपनी पत्नी को बुलाकर कहा देखो यह तुम्हारी ननद आयी है। इनहें घर के अन्दर ले चलो। किसान की स्त्री सीता जी को आदर के साथ घर के अन्दर ले गयीं, गदेला बिछाकर बैठा दिया। ननद भौजाई दोनों हिलमिलकर प्रेमपूर्वक रहने लगीं।

किसान के यहाँ रहते हुए एक दिन सीताजी ने अपनी भौजाई से कहा– भौजी तुम रोज–रोज रसोई बनाया करती हो, आज मैं बनाऊँगी। तथा भौजाई के मना करने पर भी रसोईघर में जा पहुँची। उन्होंने भीतर जाकर देखा, एक हाँडी, एक तवा और दो चार मिट्टी के बर्तनों के सिवा पीतल ताँबे का एक भी बर्तन नहीं है। खाने का सामान देखा तो ज्वार का आटा, मसूर की दाल और समा के चावल। सीता जी मन ही मन विचारने लगीं। इस सामान से मैं रसोई कैसे बना सकूँगी। फिर उन्होंने मन में श्रीराम जी का स्मरण करके कहा–

अजोध्या में मेरा जैसा रसोईघर है वैसा ही यहाँ बन जाय। सीताजी के मन में इतना आते ही मिट्टी के बर्तनों की जगह सोने-चाँदी के बर्तन हो गये। रसोईघर घी, दूध, शक्कर और तरह-तरह की खाद्य वस्तुओं से परिपूर्ण हो गया। सीता जी ने छप्पन प्रकार के भोजन तैयार किये। ऐसा भोजन किसान और उसकी स्त्री ने अपने जीवन में कभी न खाया था। वे अपने भाग्य को सराहने लगे। इसी तरह एक दिन सीताजी ने किसान की स्त्री को वस्त्राभूषणों से सुसज्जित कर दिया तथा कमजोर खेत को बड़ी मोतियों से भरी बालियों द्वारा हरा-भरा करके किसान का घर धन-धान्य से भर दिया।

धीरे-धीरे सीताजी को किसान के घर रहते बारह महीने पूरे होने को आये। जिस दिन बारहवाँ महीना पूरा होना था, उस दिन राम लक्ष्मण किसान के घर आ पहुँचे। किसान ने उनके चरणों को पखारकर आदर के साथ बैठाया। तीन दिन पहुनई कराई। तीसरे दिन राम ने सीता जी को विदा करने को कहा, तब किसान व उसकी स्त्री को बड़ा दुख हुआ। किसान ने दुखी मन से सीताजी को विदा किया। सीता जी के जाते ही किसान के घर का धन-वैभव लुप्त हो गया। उसकी वही टूटी मढैया और मिट्टी के बर्तन शेष रह गये। यह देख रामजी बोले-प्रिये !यह क्या करती हो? तुमने बारह महीने में उसे जो दिया, वह सब साथ लिये जाती हो। तुम लौटकर देखो और अपने भाई के घर की देहरी को प्रणाम करो। सीताजी ने लौटकर देखा और देहरी को प्रणाम किया। किसान का घर फिर धन धान्य से परिपूर्ण हो गया। सीता जी राम लक्ष्मण के साथ वन को चली गई।

चूँकि सीता जी का जन्म माता के गर्भ से न होकर जमीन में दबे मिट्टी के घड़े से हुआ था, अत: सीता जी पृथ्वी पुत्री हुई। इसी प्रकार किसान अन्नदायिनी पृथ्वी को अपनी माता समान मानता है। अत: सीताजी व किसान दोनों पृथ्वी पुत्री व पृथ्वी पुत्र अर्थात बहिन भाई हुए। लोककथाकार की कल्पना है कि उसने एक सर्वथा नवीन प्रसंग को जन्म दिया और इसी बहाने राम, लक्ष्मण व सीता की लोक से निकटता स्थापित की, साथ ही बुन्देलखण्ड की लोकसंस्कृति के खान पान, अतिथि समागम, लोक विश्वास आदि पक्षों का उद्घाटन भी किया। उदाहरणार्थ-सीता जी का किसान के घर से विदा होते समय राम के कहने पर लौटकर देखना तथा किसान की देहरी को प्रणाम करना प्रचलित लोकविश्वास है। बुन्देलखण्ड में रिवाज है कि जब लड़की अपने माता पिता भाई के घर से ससुराल को जाने लगती है, तब वह जाते समय घर की देहरी को प्रणाम करती है और कुछ पग चलकर एक बार लौटकर घर की ओर देख लेती है। लोगों का विश्वास है कि यदि वह ऐसा न करे तो माता पिता के घर की लक्ष्मी उसी के साथ चली जाती है।

हिन्दू संस्कृति के आदर्श पुरुष हैं-भगवान राम। राजा दशरथ की गृहस्थी आदर्श गृहस्थी है। अत: बुन्देलखण्ड में राम के जीवन से सम्बन्धित लोकगीत प्रचुर मात्रा में मिलते हैं। यहाँ पर जब किसी के घर पुत्र उत्पन्न होता है तो उसे राम का ही अनुहार माना जाता है। इस अवसर पर स्त्रियों के सुमधुर कण्ठों द्वारा गाया जाने वाला एक संचत गीत दृष्टव्य है-

राजा तो पौढ़ें पलँग पै, रानी मले पीड़ोली महाराज। हँस-हँस पूँछे राजा दशरथ कैसी धन अनमनी महाराज।
भौतक तो कहिये राजा अन्नधन भौतक लक्ष्मी महाराज। सूनो अयोध्या को राज अकेली संचत बिना महाराज।
तुम राजा जइयो बजारे संचत मोल ल्याइयो महाराज। तुम रानी मूरख अजान कहालौं समझाइये महाराज।
हाटों में हतिया बिकायें संचत नहीं पाइये महाराज। नगर को नौआ बुलैयो छुरा मँगवाइयो महाराज।
चीरों अभागिन की कूँख राजा गँवारिन कहे महाराज। काशी के पंडित बुलैयो वेद बचबाइयो महाराज।
पहलो पना जब खोलो बाँच सुनावाइयो महाराज। नगर न बाजे बधैया सखी न गाँवें सोहरो महाराज।
दूजो पना जब खोलो बाँच सुनवाइयो महाराज। अहिरा का लोबे न गाय मथन नहि धूमियो महाराज।
तीजो पना जब खोलो बाँच सुनवाइयो महाराज। राजा हैं जनम के मोगिया ग्यावन हिरणी मारियो महाराज।
सोने की हिरणी गढ़वाव रूपे के गबेलुवा महाराज। बन-बन देव छुड़ाय संचत तब हुइये महाराज।
तुम राजा जैयो पहारे सजीवन ल्याइयो महाराज। घिस बुड़िया बँटवइयो कटोरन छानियो महाराज।
दियो है बाँट बड़ार तीनई रानी अधान से महाराज। भये हैं नो दस मास ललन चार हो गये महाराज।
बाजन लगीं आनन्द बधैया सखी गावें सोहरे महाराज[2]।

राजा दशरथ पलंग पर लेटे हैं, रानी कौशल्या उनके पैर दबा रही हैं और मन में उदास हैं। उनकी उदासी देखकर राजा उनसे कारण जानना चाहती है। रानी कौशल्य कहती हैं- महाराज !धन धान्य सम्पदा सभी कुछ हैं, फिर भी अयोध्या एक संतान के अभाव में सूनी प्रतीत होती है। आप जब बाजार जायें तो मेरे लिए एक सन्तान खरीद लायें। इस पर राजा दशरथ उत्तर देते हैं रानी! तुम तो बड़ी भोली हो, कहीं सन्तान भी घाट बाजार में बिकती है? वहाँ तो हाथी बिकते हैं। तब रानी दु:खी होकर कहती हैं कि आप नाई को बुलवाकर मेरी कोख चिरवा दीजिए। ऐसी कोख किस काम की? जो सन्तान न उत्पन्न कर सके। अब राजा दशरथ ने काशी के पण्डित को

बुलवाकर भविष्य जानने हेतु पत्रा बँचवाया। पहले पृष्ठ को खोलते ही ज्योतिषी ने कहा हे राजा! न तो आपके नगर में कभी बधाई बजेंगी और न स्त्रियाँ सोहर गायेंगी। दूसरे पृष्ठ को खोलकर बाँचने के बाद उसने कहा कि न यहाँ गाय दूध देगी, न मथानी घूमेगी। तीसरे पृष्ठ को खोलते हुए ज्योतिषी ने कहा- हे राजा! आप पूर्व जन्म के बहेलिया हैं और एक गर्भिणी हिरणी मारने का पाप आप पर है। अत: आप सोने की हिरणी व चाँदी का हिरण शावक बनवाकर वन में छुड़वाइये और पहाड़ पर जाकर संजीवनी लाइये। इस संजीवनी को बराबर बाँटकर रानियों को पिला दीजिए। ऐसा करने पर आपके सन्तान होगी। राजा ने ऐसा ही किया। इससे तीनों रानियाँ गर्भवती हुई और दसवें मास चार पुत्र हुए। अयोध्या में सर्वत्र बधाई बजने लगी, सखियाँ सोहर गाने लगीं।

रामायण की प्रचलित कथा के अनुसार राजा दशरथ व रानी कौशल्या पिछले जन्म में मनु शतरूपा थे, जिन्होंने कठोर तपस्या करके भगवान को अपने पुत्र के रूप में प्राप्त करने का वरदान पाया था। लेकिन इस लोकगीत के अनुसार राजा दशरथ को पूर्व जन्म का बहेलिया बताया गया है, जो एक गर्भिणी हिरणी को मारने के कारण पाप के भागी बने, इसी कारण अगले जन्म में उन्हें पुत्र की प्राप्ति नहीं हो रही थी। लगता है लोककवि को राजा दशरथ द्वारा धोखे से श्रवण कुमार का वध किये जाने की घटना का ज्ञान होगा, जिस घटना को उसने राजा दशरथ के निपुत्री होने के कारण से जोड़ दिया है। रामायण में राजा दशरथ पुत्र प्राप्ति के लिए गुरू वशिष्ठ की सलाह पर यज्ञ का विधान करते हैं, जिसके उपरान्त उन्हें पुत्र रत्नों की प्राप्ति होती है। लेकिन यहाँ पर लोककवि ने यह काम काशी के पण्डित द्वारा भविष्य को बचवाकर किया है, जिसकी सलाह पर राजा सोने-चाँदी की हिरणी हिरण बनवाते हें तथा पहाड़ से संजीवनी लाकर रानियों को पिलाते हैं, जिससे उनके चार सन्तानें उत्पन्न होती हैं। बुन्देलखण्ड के सामान्य जन में काशी के पण्डितों की विद्या तथा उनके ज्योतिष सम्बन्धी ज्ञान का प्रभाव विद्यमान मिलता है, जिसका उपयोग लोककवि ने अपने गीत में किया है। इस लोकगीत में माता की पुत्र प्राप्ति न होने की मार्मिक वेदना तथा सोने चाँदी के प्रतीकात्मक हिरण बनवाना व संजीवनी बूटी के सेवन से पुत्र की प्राप्ति का विश्वास लोक की आस्था के सर्वथा अनुकूल है।

इसी प्रकार बुन्देली व अवधी में प्राप्त एक दूसरा संचतगीत दृष्टव्य है, जिसमें रानी कौशल्या और हिरणी के संवाद में कितना मर्म है। राम की छठी में आज हिरण मारा जायेगा, इसलिए हिरणी दु:खी है-

छापक पेड़ छिहुलिया त पतबन गहबर हो ललना ताही पर ठाढ़ हिरनिया त मन अति अनमन हो
चरत-चरत हिरणा हिरणी से पूछेलैऽ हो हिरणी किआ तोहरो चरहा झुरान कि पानी बिन मुरझहुं हो।
नाहीं मोरा चरहा झुरान न पानी बिन मुरझाहुं हो ललना काल्हि हुई राजा की छठिया ताहइ मारि डरहनि हो।
मचिया हि बइठलि कौसिला रानी हिरनी अरज करे हो। रानी मंसुआ त चुरिहैं रसाइयाँ खलरिया हमके देतिहु हो
पेड़क प टंगती खलरिया त हेरि फेरि देखतिऊ हो। ललना देखि देखि जियरा बुझौतिऊ मनहुं हिरना जीयत हो
जाहु हिरनी जाहु घर अपने खलरिया नांहि देइबि हो। हिरनी खलरी के खंजरी मढ़इबों, ललन मोर खेलिहनि हो
जब-जब बाजई खंजरिया सबद सुनि अनकई हो। ललना छिहुली तर ठाढ़ हिरनियां हिरन के बिसूरेली हो।[10]

इस लोकगीत में हिरनी अपने हिरन की सम्भावित हत्या से दुखी है, क्योंकि राजा के लड़के की छठी है, जिसमें हिरन को मारकर उसका माँस पकाया जायेगा। हिरनी कौशल्या जी के पास जाकर विनय करती है कि उसे कम से कम हिरन की खाल ही मिल जाये, जिसे देखकर वह संतोष कर लेंगी, कि उसका हिरन उसके साथ है। लेकिन कौशल्या रानी कहती है कि खाल की खंजडी से तो मेरा बेटा खेलेगा। उदास हिरनी लौट जाती है और जब जब खंजडी बजती है, तब-तब उसकी आवाज सुनकर हिरनी को अपने हिरन की याद आती है। यह कितनी मार्मिक वेदना है, जिसमें प्रिय के करुण बिछोह की यादें सम्मिलित हैं। लोकजीवन में हिरन की खाल से बच्चों को खेलने के लिए खंजरी मढवाने की एक नृशंस और निर्दय प्रवृत्ति को किस प्रकार कौशल्या व राम के माध्यम से जनसामान्य में साधारणीकृत करके कहा गया है। निश्चय ही इससे वन्य पशुओं के प्रति दया, ममता उपजाने का संकल्प प्रकट होता है, साथ ही प्रकृत्ति से रस लेकर जनसामान्य को संस्कारित करने की लोकविधि के दर्शन भी होते हैं।

गोस्वामी तुलसीदास जी ने भगवान श्रीराम के पावन चरित्र को रामचरितमानस के सात काण्डों में प्रणीत किया है। उसी को अज्ञात लोककवि ने अपनी सादी-सादी बुन्देली बोली में केवल छ: पंक्तियों में अभिव्यक्त कर रामकथा को सामान्यजन को बोध कराया। यही उस लोककवि की सारग्रहणी विशेषता है। गीत का अवलोकन कीजिए-

एक राम इक रावन्ना बे छत्री बे बामन्ना। उननें उनकी नार हरी उन्नें उनकी कुगत करी।
बातन बड़गऔ बातन्ना तुलसी रचदऔ पोथन्ना।

लोकसाहित्य सदा से शिष्ट साहित्य की जीवनधारा का निर्माण करता आया है। साहित्येतिहास में ऐसे अनेक अवसर आये हैं, जब शिष्टसाहित्य निष्प्राण होने लगा है, तब उसने लोकसाहित्य से विभिन्न भावभूमियों एवं विषयों के सम्बन्ध में सहायता ली है। ऐसा करने से

शिष्टसाहित्य में जीवन्तता तो आयी ही, साथ ही लोक में उसका यत्किंचित प्रभाव भी अवश्य पड़ा। इसी कारण भगवान राम का चरित्र जनसामान्य में लोकप्रिय हुआ तथा वह लोकसाहित्य की विविध विधाओं की विषयवस्तु बना। बुन्देलखण्ड के लोकसाहित्य की अपनी विशेषताएँ और परम्पराएँ हैं, जो लोकजीवन के विविध पक्षों को पूरी जीवन्तता व समग्रगता के साथ प्रस्तुत करती हैं। जिनमें सांस्कृतिक, सामाजिक, राजनैतिक, धार्मिक, सामूहिक और वैयक्तिक सभी चिन्तनधाराओं का साक्षात्कार होता है। बुन्देलखण्ड के जनजीवन का ऐतिहासिक और सामाजिक विकास यदि देखना है तो यहाँ के लोकसाहित्य का आस्वाद अपेक्षित है, जिसमें रसभोक्ता को श्रृव्य और दृश्य दोनों प्रकार का आन्नद मिलेगा। साथ ही चम्बल, टोन्स, यमुना, बेतवा केन और नर्मदा नदियों के बीच की अमूल्य धरोहरों का भाषा, भाव और संस्कृति के माध्यम से दर्शन भी किया जा सकता है।

सम्पर्क 5. टीचर्स होम, विश्वविद्यालय कैम्पस, खन्दारी, आगरा-282002

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. बुन्देली का भाषाशास्त्रीय अध्ययन डॉ. रामेश्वरदयाल अग्रवाल, विश्वविद्यालय प्रकाशन, लखनऊ 1963।
2. बुन्देलखण्ड का बृहद इतिहास, काशीप्रसाद त्रिपाठी, भारत भवन, पुरानी टेहरी, टीकमगढ़ म.प्र. 1991।
3. लोकाचरण बुन्देली संस्कृति और साहित्य की झलक, डॉ. गणेशीलाल बुधौलिया, बुन्देल-भारती प्रकाशन, राठ (हमीरपुर), 1991।
4. लोकसाहित्य की भूमिका, डॉ. कृष्णदेव उपाध्याय, साहित्य भवन प्रा. लिमिटेड, इलाहाबाद 1992।
5. हिन्दुस्तानी लोकसंस्कृति-विषयक अंक, प्रधान सम्पादक-डॉ. रामकुमार वर्मा, हिन्दुस्तानी एकेडमी इलाहाबाद जुलाई-दिसम्बर 1984।
6. लोकवार्ता मुख्यत: बुन्देलखण्ड से सम्बन्धित, कृष्णानन्द गुप्त, लोकवार्त्ता कार्यालय, टीकमगढ़ सितम्बर, 1944 अंक।
7. केतकी के फूल बुन्देली लोककथा संग्रह, शिवसहाय चतुर्वेदी, अन्तरचन्द कपूर एण्ड सन्स, दिल्ली, 1955।
8. संग्रहीत लोकगीत, दिनांक 30.6.1993 गायिका-सिंगाररानी, अवस्था 75 वर्ष, जाति-क्षत्रिय, शिक्षा साक्षर, पता : ग्राम व पोस्ट- कलरा, टीकमगढ़ म.प्र.।
9. मामुलिया (बुन्देली लोकसंस्कृति विशेषांक), नर्मदा प्रसाद गुप्त बुन्देलखण्ड साहित्य अकादमी छतरपुर अंक 22-24 संवत् 2046 विक्रमी।
10. हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग में कार्यरत श्री उदयशंकर दुबे से बातचीत के आधार पर दिनांक, 25.10.1994।

सहायक ग्रन्थ सूची

1. लोकसाहित्य की भूमिका, सत्यव्रत अवस्थी, रायसाहब रामदयाल अगरवाला, प्रयाग, 1957।
2. बुन्देलखण्ड की ग्राम कहानियाँ, शिवसहाय चतुर्वेदी, हिन्दी ज्ञान मन्दिर लिमिटेड, चर्च गेट स्ट्रीट, फोर्ट बुम्बई, 1947।
3. लोकसाहित्य विज्ञान, डॉ. सत्येन्द्र/ शिवलाल अग्रवाल एण्ड कं. प्रा. लिमिटेड आगरा, 1962।